# कालपृष्ठ पर अंकित [खंड - 2]

## सामाजिक यथार्थ और मानवीय सरोकारों की कविताएँ

## [ डा. महेंद्रभटनागर]

(जिजीविषा / 33)

रचना-काल: सन् 1948-56

128 अमिताभ

129 आज की ज़िन्दगी

130 मध्य-वर्ग (चित्र 1)

131 मध्य-वर्ग (चित्र 2)

132 भविष्यत्

133 लेखनी से —

134 मैं कहता हूँ !

135 राही

136 अनुष्ठान

137 पटाक्षेप

138 निश्चय

139 झुकना होगा

140 तुम आज लिख लो —

141 बदल कर रहेगा

142 नयी सुबह

143 सावधान

144 नया यौवन

145 जनता

146 जवानों का गीत

147 तसवीरें

148 बहुतेरे

149 पुनर्निर्माण

150 नयी चेतना

151 विनाश-लीला

152 बन्द करो

153 आज

154 मजलूम

155 श्रमिक

156 मानव-समता का त्योहार

157 ओ मज़दूर-किसानो!

158 अकेला नहीं हूँ

159 जवानी

160 ज्योति-पर्व

(नयी चेतना / 42)

रचना-काल: सन् 1950-53

161 बिजलियाँ गिरने नहीं देंगे!

162 ललकार

163 आज़ादी का त्योहार

164 अपराजित

165 चेतना

166 काटो धान

167 रोक न पाओगे
168 जागते रहेंगे
169 नया इंसान
170 आँधी
171 झंझावात
172 नव-निर्माण
173 ज़िन्दगी का कारवाँ
174 बढ़ते चलो
175 नये इंसान से तटस्थ-वर्ग
176 नयी दिशा
177 परम्परा
178 क्या हुआ
179 दूर खेतों पार
180 युग और कवि
181 विश्वास
182 आश्वस्त
183 दीपक जलाओ
184 आभास होता है
185 आज देखा है
186 मुझे भरोसा है
187 मुख को छिपाती रही
188 नया समाज
189 युगान्तर
190 छलना
191 मत कहो
192 नया युग
193 पदचाप
194 भोर का आह्वान
195 निरापद
196 सुर्खियाँ निहार लो
197 युग-परिवर्तन
198 नयी संस्कृति
199 गंगा बहाओ
200 नयी रेखाएँ
201 भविष्य के निर्माताओ!
202 कवि

(टूटती शृंखलाएँ / 47)

रचना-काल: सन् 1944-48

203 सदियों बाद
204 स्वातंत्र्य-झंझावात
205 ध्वस्त करो
206 नयी दुनिया
207 संग्राम
208 पीयूष-धारा
209 युग-विहग
210 जन-समुन्दर
211 मुक्ति की पुकार

212 अजेय
213 ढहता महल
214 संक्रान्ति-काल
215 पाषाण-उर
216 मानवी-व्यापार
217 इतिहास
218 झंझा में दीप
219 होली जला दो
220 अभियान के बाद
221 प्रलय
222 इन्क्रलाब
223 जागरण
224 परिवर्तन
225 उद्बोधन
226 सम्बल
227 नया दृश्य
228 नयी रचना
229 हुंकार
230 नयी निशानी
231 युग-निर्माता
232 धधकती आग
233 गाढ़ता हुआ
234 शहीदों का गीत
235 मुझे है याद
236 कला
237 युग कवि से
238 मंज़िल कहाँ
239 पिछड़े हुए राष्ट्र से
240 ज़िन्दगी की शाम
241 ज़िन्दगी
242 शिशिर-प्रभंजन
243 नया विश्वास
244 ध्वंस और सृष्टि
245 मेरे हिन्द की संतान
246 स्नेह की वर्षा
247 बदलो
248 जन-रव
249 पहली बार

• •

(128) अमिताभ

.

छा रहा शंका-तिमिर फिर
शीत-युद्ध सभीत वातावरण में !
और लगता है —
लिपटते जा रहे पन्नग चरण में !
कान बजते फूत्कारों के स्वरों से,
शांति घायल
उड़ गयी सारे घरों से !

है प्रपीड़ित भग्न जन-मानस
परस्पर की कलह से !
स्नेह-सूखे नेत्रा निर्मम,
क्रुद्ध-मुद्रा मूक हर-दम !
.
घिर रहीं संस्कृति-क्षितिज पर
ध्वंस संकेतक घटाएँ,
जल रही हैं फिर मनुज की
भोग-रत सूखी शिराएँ !
उग रहा फिर
स्वार्थ का जंगल
अमंगल,
देखकर जिसको नहीं खिलते कभी
फल-फूल जीवन के,
नहीं देते सुनायी
गीत सावन के !
नहीं बहते कभी
जिसमें मधुर निर्झर,
नहीं देते सुनायी
मुक्त विहगों के सरस स्वर !
.
इसलिये अमिताभ !
युग की दृष्टि तुम पर
है लिये विश्वास दृढ़तर;
सौम्य-मुख की हर किरन को
आज दो फिर हर नयन को !
यह नयी पीढ़ी
तुम्हारी मूक-सेवा साधना से
बलवती हो !
यह नयी पीढ़ी
तुम्हारे भव्यतम उत्सर्ग की शुभ-भावना से
बलवती हो !
.
• •
(129) आज की ज़िन्दगी
.
ज़िन्दगी हँसती हुई मुरझा गयी ;
चाँद पर बदली गहन आ छा गयी !
.
यामिनी का रूप सारा हर लिया
कामिनी को हाय विधवा कर दिया !
.
आदमी की सब बहारें छीन लीं,
उपवनों की फूल-कलियाँ बीन लीं !
.
फट गया मन लहलहाते खेत का,
बेरहम तूफ़ान आया रेत का !
.
उर-विदारक दीखता है हर सपन,
सब तरफ़ से चाहनाओं का दमन !

.
रीति बदलीं आधुनिक संसार की,
राह सारी मुड गयी हैं प्यार की !
.
सामने बस स्वार्थ का जंगल घना
दुर्ग जिसमें डाकुओं का है बना !
.
मौत की शहनाइयाँ बजती जहाँ,
रंग-बिरंगी अर्थियाँ सजती जहाँ !
.
लेटने को हम वहाँ मजबूर हैं,
वेदना से अंग सारे चूर हैं !
.
इस तरह लँगड़ी हुई है ज़िन्दगी
लड़खड़ाकर गिर रही लकवा लगी !
.
• •
(130) मध्य-वर्ग (चित्र 1)
.
मेघों से घिरा आकाश है !
चहुँ ओर छाया,
बंद आँखों के सदृश,
गहरा अँधेरा,
घोंसलों में मूक चिड़ियाँ
ले रहीं सुख से बसेरा,
और हर अट्टालिका में
बज रहा मनहर पियानो, तानपूरा !
.
पर, टपकती छत तले
सद्यः प्रसव से एक माता आह भरती है !
मगर यह ज़िन्दगी इंसान की
मरती नहीं,
रह-रह उभरती है !
.
• □
(131) मध्य-वर्ग (चित्र 2)
.
दस बज रहे हैं रात के—
काफ़ी दूर पर
कुछ बेसुरे-से ढोल बजते हैं
किसी बारात के !
.
अति-तार स्वर से
गा रहा है रेडियो सीलोन
बासी गीत फ़िल्मी
'आन' के 'बरसात' के !
.
पास के घर में
थकी-सी अर्द्ध-निद्रित
तीस वर्षीया कुमारी
करवटें लेती किसी की याद में !
.

क्लर्क है उसका पिता
और वह उलझा हुआ है
फ़ाइलों के ढेर में !
(ज़िन्दगी के फेर में !)
सोचता है —
रात काफ़ी हो गयी,
अब शेष देखा जायगा जी बाद में !
.
झँपने लगीं पलकें
बड़े बेफ़िक्र बचपन की सहेजी याद में !
.
• •
(132) भविष्यत्
.
मनुष्य के भविष्य-पंथ पर
अपार अंधकार है,
प्रगाढ़ अंधकार है !
न चाँद है, न सूर्य,
बज रहा न सावधान-तूर्य !
.
मृत्यु के कगार पर
खड़ी मनुष्यता सभीत,
बार-बार लड़खड़ा रही !
कि उद्जनों व अणुबमों-प्रयोग से
कराह काँपती मही !
तबाह द्वीप हो रहे,
बड़े-बड़े नगर तमाम
देखते सदैव स्वप्न में 'हिरोशिमा' !
गगन विराट वक्ष पर
विकीर्ण लालिमा,
धुआँ, धुआँ, धुआँ !
.
मनुष्य के भविष्य-पंथ पर
प्रकाश चाहिए,
प्रकाश का प्रवाह चाहिए !
हरेक भुरभुरे कगार पर
सशक्त बाँध चाहिए !
अटल खड़ा रहे मनुष्य,
आँधियों के सामने
अड़ा रहे मनुष्य
शक्तिवान, वीर्यवान, धैर्यवान
.
ज़िन्दगी तबाह हो नहीं,
कराह और आह हो नहीं !
हँसी !
सफ़ेद दूधिया हँसी
हरेक आदमी के पास हो !
सुखी भविष्य की
नवीन आस हो !
.

• •

(133) लेखनी से —

.

लेखनी मेरी !
समय-पट पर चलो ऐसी कि जिससे
त्रास्त जर्जर विश्व का
फिर से नया निर्माण हो !
क्षत, अस्थि-पंजर, पस्त-हिम्मत
मनुज की सूखी शिराओं में
रुधिर-उत्साह का संचार हो !

.

ओ लेखनी मेरी, चलो !
साये हुए हैं जो
उन्हें उगते दिवाकर की ख़बर दो !
और पथ में जो रुके
उनको नयी ज्योतित डगर दो !
काफ़िला जो
रेत के नीचे दबा बेचैन है
उसे सतत आकाश-आरोहणमयी
नव-शक्ति दो !
तेवान, गोआ की ज़मी को मुक्ति दो !

.

भयभीत जो
उसको सबल विश्वास दो !
रोते हुए मुख पर
रुपहला हास दो !
ओ लेखनी मेरी ! चलो,
जिससे कि दकियानूस-दुनिया के
सभी दृढ़ लौह बंधन टूट जाएँ,
और संस्कृति-सभ्यता की मूर्तियाँ सब
आततायी के विषैले क्रूर चंगुल से
सदा को छूट जाएँ !

.

ध्वंस पर
अभिनव-सृजन-आह्वान दो,
हर आदमी के कंठ में
श्रम का सबल मधु गान दो !
प्रत्येक उर में
प्यार का सागर भरो,
धुँधले नयन में
रोशनी घर-घर भरो

.

• •

(134) मैं कहता हूँ !

.

मैं शोषित दुनिया के
आज करोड़ों इंसानों से कहता हूँ,
मैं भूखों-नंगों, पददलितों,
बेबस और निरीहों की
आहों से कहता हूँ —

अब और अँधेरे में
मत खोजो पथ अपना,
अब और न देखो
अंतर की आँखों से सपना !
खोलो पलकों को साथी,
नया सबेरा
आज तुम्हारे स्वागत को तैयार !
कोयल वृक्षों के झुरमुट से
कहती आज पुकार-पुकार —
नया सबेरा, नया ज़माना
बदल गया संसार !
.
मैं उन लड़ने वाले,
हिमगिरि की छाती पर चढ़ने वाले,
कंटक-पथ पर बढ़ने वाले
चरणों से कहता हूँ —
अब मंज़िल बिल्कुल पास तुम्हारी,
निश्चय ही
होगी पूरी आस तुम्हारी !
युग-युग की
सारी बीमारी मिट जाएगी !
मुख पर छायी
करुण उदासी हट जाएगी !
नयी हवा में, स्वच्छ हवा में
तन को जर्जर करने वाले कीड़े-मच्छर
इस दुनिया से भग जाएंगे,
उड़कर दूर कहीं पर
कीचड़-दलदल पर मँडराएंगे !
.
मैं उन भारी-भरकम
युग-नभ-भेदी दुर्दम
आवाज़ों से कहता हूँ —
नवयुग का जय-जयकार करो !
अगणित कंठों में
विजयी गान भरो !
फ़ौलादी ताक़त जनता की
कल के अवरोधी दुर्गों पर
उन्मुक्त खड़ी !
हो, सचमुच, ऐसी घड़ियों की
उम्र बड़ी !
.
मैं उन जीने और जिलाने वालों से,
इंसानों की शक्लों में
जाग्रत शांत फ़रिश्तों से,
जनयुग को
मज़बूत बनाने वालों से कहता हूँ —
.
धरती खोदो !

माँ आँचल में
सोने-चाँदी के उपहार लिए,
बरसों से सतत प्रतीक्षा में
देख रही है राह तुम्हारी !
पहुँचो
आयी बड़े दिनों के बाद
ग़रीबों की बारी !

.

• •

(135) राही

.

जब आज तुम्हारे नयनों ने
युग-पथ पहचान लिया,
जीवन के हर अनुभव से
अपना और पराया जान लिया,
फिर क़दमों को भय क्या है ?
हिम्मत से आगे बढ़े चलो,
निर्भय हो आगे बढ़े चलो,
ताक़त से आगे बढ़े चलो !

.

राही बनकर निकले हो
क्या झंझा के घोर झकोरों से,
पथ के हिंसक चोर-लुटेरों से,
कंकड़-पत्थर की अविरल बौछारों से,
नाशक अस्त्रों के तीव्र प्रहारों से
डर जाओगे ?
कायर बन कर,
पीठ दिखा कर,
भग जाओगे ?

.

राही बन कर निकले हो
यदि झाड़ी-काँटों के घेरे से,
पथ पर छाये सघन अँधेरे से,
टकराने में सकुचाओगे,
तो निश्चय ही —
काँटों में फँस जाओगे !
दलदल में धँस जाओगे !
मिट्टी में मिल जाओगे !

.

आँखों में रोष उतारो,
फ़ौलादी मुट्ठी बाँधो,
बादल से गरजो-गरजो !
पर्वत की छाती को फोड़ो,
चट्टानों की दीवारों को तोड़ो,
दुर्दम दुर्जय धारा बनकर उमड़ो !
जिससे थर-थर काँपे
अवरोधी भूतों के टोली,
हो जाए सारे अरमानों की होली !
बिखरे केवल आज तुम्हारे

विश्वासों की,
आशाओं-अभिलाषाओं की रोली !
.
सौगंध तुम्हें मेरे राही !
रुकना न कभी,
जब तक निज बल से
उस ताक़त का चकनाचूर न हो —
जिसने क़ैद सबेरे को कर रक्खा है !
जिसने दिल की धड़कन पर
ख़ूनी पंजा रक्खा है !
तुम उसको रवि बनकर ध्वस्त करो !
पूँजीशाही दुनिया के
वैभव-युग को अस्त करो !
.
• •
(136) अनुष्ठान
.
ग़रीबी अब
अमीरी के न क़दमों पर झुकेगी !
हाथ फैलाते हुए
अब और दीखेंगे न
जूठे चार-टुकड़ों के लिए
मानव बुभुक्षित !
नग्न तन का ढाकने को औरतें
उतरे हुए अब वस्त्रा चाहेंगी नहीं !
.
सच है —
मिटेगी यह न युग की नव-जवानी अब
किसी की वासना की पूर्ति में !
हरगिज़ अलापेंगे नहीं
गायक कला-साधक
किसी क्षय-ग्रस्त जर्जर वर्ग के हित !
.
ग़रीबी ने बग़ावत का
प्रबलतम कर दिया एलान,
बुभुक्षित का
उठा है जाग फिर अभिमान !
.
लो,
सारी दमित शोषित दुखी हत औरतें
बलिदान करने को खड़ीं तैयार !
युग की नव-जवानी मुक्त है,
नव-लालिमा से युक्त है !
उठा प्रेरक
नये कवि का नया संगीत है !
आकाश में तारों सरीखी
आज तो उसकी लिखी
ध्रुव जीत है !
.
उट्ठो,

करोड़ों मेहनतकश नौजवानो !
विश्व का नक्शा बदलने के लिए ;
अणु-शक्ति से,
सुख से भरी
दुनिया बनाने के लिए अभिनव,
धरा पर शीघ्र लाने को
नया मानव !

.

• •

(137) पटाक्षेप

.

दमन के बादलों को चीर अब बिजली चमकती है,
अँधेरा दूर होता है, नयी आभा दमकती है !
अथक जन-शक्ति के तूफ़ान छाये आसमानों पर
कि गहरी धूल के कम्बल दिशाएँ ओढ़ती डर कर !

.

सदा विद्रोह होता है, ज़माना जब बदलता है,
नया संसार आता है, पुराना जीर्ण जलता है,
न हिम्मत हारता इन्सान चाहे मौत मँडराये
हज़ारों ज़िन्दगी के गीत उसने शान से गाये !

.

भरे उत्साह, दुर्दम शक्ति, जीवन-वेग-नव दुर्धर
नया इंसान पैदा हो गया है आज धरती पर,
कि जिसके सामने प्रतिरोध आकर टूट जाता है,
अनल जिसको बड़ा गहरा प्रबल सागर बताता है !

.

चुनौती दे रहा वह भाग्य के निश्चित सितारों को,
बनाया जा रहा फिर से सभी युग भग्न-तारों को,
नया मनु बल समाया यांग्त्सी की स्वस्थ घाटी में
नयी बस्ती बसी पीली पुरानी मूक माटी में !

.

सुरंगें उड़ रहीं साम्राज्य शाहों ने बिछायीं जो,
धसकती जा रही दीवार डालर ने उठायी जो,
मिटेगा नस्ल का सिद्धान्त भी प्रत्येक कोने से
टिकेगा अब नहीं उद्जन-बमों की फ़स्ल बोने से !

.

• •

(138) निश्चय

.

एक दिन निश्चय
तुम्हारे हर घिनौने और ज़हरीले
इरादों की समस्त जड़ें
अवनि को फोड़ उखड़ेंगी।
एक दिन निश्चय
तुम्हारी बेरहम नंगी कि ख़ूनी
वासनाओं की सड़ी धारा
धरा की धमनियों को छोड़कर
आकाश-पथ पर सूख जाएगी !
तुम्हारे स्वप्न के
सारे गगन-चुंबी महल

अभिनव प्रखर स्वर्णिम सुबह तक
पत्थरों के ढेर में
निश्चय, बदल कर
भूमि पर सोते मिलेंगे !
.
आज जन-जन के हृदय में आग है,
मुँह से निकलती बात भी बेलाग है !
संघर्ष से हर आदमी को
हो गयी बेहद मुहब्बत,
ज़िंदगी की पड़ गयी आदत
हमेशा राह पर चलना !
निरंतर सूर्य-सा जलना !
मनुष्यों की अथक ऐसी
निडर, दृढ़ फौज़ उगती जा रही,
जिसके क़दम पड़ते
धरा सज्जा बदलती जा रही !
.
• □
(139) झुकना होगा !
.
धधकी नव-जीवन की ज्वाला पर
जितना तुम और अँधेरा फेंकोगे
वह उतनी ही द्विगणित आभा से
दमकेगी !
जितने गहरे काले घन अम्बर में छाएंगे
उतनी गहरी उज्वलता से बिजली
चमकेगी !
.
धरती पर जितनी
मनुज-रुधिर की बूँद गिरेंगी
उससे कहीं अधिक
विद्रोही जनता की फ़सल उगेगी !
.
जितना ज़्यादा जन-धारा को रोकोगे
उतनी ही गति से
वह अँगड़ाकर, लहराकर
पर्वत की छाती को फोड़ बहेगी !
.
जितना ज़्यादा निर्धन जनता को लूटोगे
उतना ही बदले में
मूल्य चुकाना होगा !
जितना ज़्यादा भोली मानवता पर
चढ़ इतराओगे
उतना ही उसके सम्मुख
घुटनों के बल झुकना होगा !
.
• •
(140) तुम आज लिख लो —
.
तुम आज लिख लो —

कि थोड़े दिनों में
हज़ारों युगों की
पुरानी, सड़ी
दासता की इमारत बड़ी
भूमि पर लोटती
भग्न बिखरी मिलेगी !
अनेकों बरस से
ग़रीबों, किसानों
मजूरों व श्रमिकों के
ताज़े रुधिर से
सनी वाटिका
.
पूर्ण उजड़ी मिलेगी !
दमन के धुएँ से
नयी आग बन कर
गगन में लहरती दिखेगी !
.
कि जिससे
लुटेरों के डेरे मिटेंगे,
व जिनकी सबेरे-सबेरे
हवा में बुझी राख उड़ती दिखेगी !
.
• •
(141) बदलकर रहेगा !
.
हवा जो चली है नयी वह
गरजती हुई कल
बनेगी अथक वेग तूफ़ान का !
और जो आज
युग की हरारत से
पिघला जमा बर्फ़
वह कल
प्रवाहों की दृढ़ शक्ति बनकर के
दुनिया का नक़्शा
बदल कर रहेगा !
कि जो यह लगा है
अभी आज हलका-सा धक्का
वही कल धरा को
उलट कर, पुलट कर,
हिला कर, डुला कर,
नया रूप देकर रुकेगा !
.
• •
(142) नयी सुबह
.
जो बर्फ़ीली रातों में
ओढ़े कुहर का कम्बल,
गठरी से बन
चिपका लेते उर से टाँगे निर्बल ;
अधसोये से

कुछ खोये-खोये से
देखा करते नयी सुबह का स्वप्न मनोरम,
कब होता है विश्वास कराहों से कम ?
.
सर्दी ज्यों-ज्यों बढ़ती जाती है
नव-जीवन की चिनगारी
निकट सरकती आती है।
ये आँखें देखेंगी कुछ क्षण के बाद
नया सबेरा, नया ज़माना !
नव-जीवन का नव-उन्माद !
.
कभी भी बुझ न सकेगा
जलता नूतन दुनिया के
आज करोड़ों मेहनतकश इंसानों की
आशाओं-अभिलाषाओं का नया चिराग़ !
.
• •
(143) सावधान
.
अब और न चलने पाएगी परदापोशी,
भंग हुई है गत युग की जड़ता बेहोशी !
.
सावधान हो जाओ, ओ ! जन-पथ के द्रोही,
युग है दलितों का जिसकी बाट सदा जोही !
.
ललकार रहा है नित धरता मज़बूत क़दम
इंसान नया, नव राह बना, कर दूर वहम !
.
कंधों पर आज किये नव-रचना भार वहन,
टकरा कर मर्दित दग्ध-विषैला-क्रूर दमन !
.
निष्फल अभियान विपक्षी व्यूह हुए लुंठित,
कल की आँधी देख रही प्रतिहत राह थकित !
.
नव-लाली ले उगता लो जनता का सूरज,
'नया सबेरा' आज दमामा कहता बज-बज !
.
मानव के हाथों में सुदृढ़ हथौड़े का बल,
पर्वत की छाती पर चलता जनता का हल !
.
हरियाली लाएगा, समता विश्वास अमर,
फूटेंगे अंकुर पथरीली बंजर भू पर !
.
रस का सागर लहराएगा जन-जन के हित,
बरसेगा जीवन कण-कण पर मुक्त असीमित !
.
• •
(144) नया यौवन
.
आत्म-निर्भरता, अमिट विश्वास,
अद्भुत धैर्य से
शोषित, दमित, वंचित, दुखी

जगकर बग़ावत के लिए तैयार हैं !
अब दासता का बोझ
पल भर भी नहीं स्वीकार है !
.
बरसों पुराने बंध ढीले हो गये,
ख़ूनी विरोधी राक्षसों के
लाल फूले गाल पीले हो गये !
.
साम्राज्यवादी शृंखलाएँ लौह की —
जिनने जकड़ इंसान को
दम घोंट देने का
रचा षड्यंत्र था,
जनतंत्रवादी शक्तियों की चोट से,
स्वाधीनता के प्रज्वलित अंगार से,
हर ग्रंथि से
हर जोड़ से
अब टूटती जातीं सभी !
.
जंगबाज़ों
ज़िन्दगी के दुश्मनों की टुकड़ियाँ
फैली हुई हैं जो
धरा के वक्ष पर कुछ इस तरह
जिससे कि लेने ही नहीं देतीं
कभी साँसें खुली;
जन-शक्ति के
उत्साह के भूकम्प से निर्मित
दरारों में दबी जातीं
हज़ारों मील गहरी कब्र बन !
.
जूझा नये युग का नया यौवन
अथक, दुर्दम
कि जो विष तक पचा लेगा,
मरण को सिर उठाने तक नहीं देगा,
अकेला
तप्त लोहे के चने निर्भय चबा लेगा !
.
यही है वह नया यौवन
बगीचों में रबर के
और फैले जंगलों में
जो मलय के आज उमड़ा है !
यही है वह नया यौवन
कि जो -
जीवित बहादुर मुक्त उत्तर-कोरिया की
हर गली में आज उमड़ा है !
बड़ी मज़बूत डाॅलर से बनी
दीवार का उर भेद कर
मैदान में जो चीन के
दरिया सरीखा बाढ़-सा छा आज फैला है !
कि इण्डोचीन की लहरें

उसी के रक्त से खौलीं !
.
जहाँ के नौजवानों के गलों से
झर रही विद्रोह की बोली !
यही है वह नया यौवन
कि जो नव-एशिया के हर मनुज के
चेहर पर आज दमका है !
सघन काले भयावह बादलों को चीर कर
बिजली सरीखा मुक्त चमका है !
.
अमित-पुरुषार्थ,
अविजित-शक्ति
उज्ज्वल शांति के विश्वास को लेकर
सुखद सुन्दर नयी दुनिया बसाने को
करोड़ों हाथ कसकर
आज जो तैयार है !
जन-शक्ति के सम्मुख
रुआँसा लड़खड़ाता रोष
एटम-बॉम्ब का
बेकार है,
बेकार है !
.
• •
(145) जनता
.
आतंक का शासन
हमेशा रह नहीं सकता;
क्योंकि जनता
कुंभकर्णी नींद सोती है नहीं !
क्योंकि जनता की
कभी भी मौत होती है नहीं !
.
प्रमाणों की ज़रूरत और —
यदि करनी तुम्हें महसूस
जनता के हृदय की साँस की धड़कन
किसी भी देश के इतिहास के पन्ने
पलट कर देख सकते हो !
नहीं तो आज
मेरा देश आकर घूम सकते हो !
.
जहाँ इंसान ने
काली निराशा की पुरानी लाश को
भू की अतल गहराइयों में गाड़ कर
रंगीन अभिनव आश के
विश्वास के पौधे लगाये हैं !
अँधेरे में हज़ारों दीप
जीवन के जलाये हैं !
.
जवानी से भरी नदियाँ
जहाँ पर मुक्त बहती हैं,

कि कल-कल राग में
युग का नया संदेश कहती हैं !
.
जहाँ इंसान
दुनिया को बदलने के लिए
बड़े उत्साह से संयुक्त होते हैं !
कड़े श्रम से
धरा पर ज़िन्दगी के बीज बोते हैं !
.
• •
(146) जवानों का गीत
.
मिलाये क़दम से क़दम, गीत गाती,
बढ़ी जा रही है जवानों की टोली !
जवानों की टोली !
.
मनुज को बदलने, धरा को बदलने,
दमन की सभी शक्तियों को कुचलने,
जलाने असुर-राज की आज होली !
मिलाये क़दम से क़दम, गीत गाती,
बढ़ी जा रही है जवानों की टोली !
जवानों की टोली !
.
डगर में ज़रा भी न कोई रुका है,
प्रहारों के सम्मुख न कोई झुका है,
हिमालय-से सीने पै झेली है गोली !
मिलाये क़दम से क़दम, गीत गाती,
बढ़ी जा रही है जवानों की टोली !
जवानों की टोली !
.
इमारत नयी ये बनाने चले हैं,
कि खेतों में सोना उगाने चले हैं,
भरेंगे सताये गरीबों की झोली !
मिलाये क़दम से क़दम, गीत गाती,
बढ़ी जा रही है जवानों की टोली !
जवानों की टोली !
.
सबेरा हुआ है, अँधेरा मिटा है,
कि आँखों के आगे से परदा हटा है,
बिखरती गगन में नयी आज रोली !
मिलाये क़दम से क़दम, गीत गाती,
बढ़ी जा रही है जवानों की टोली !
जवानों की टोली !
.
बरस कर घने बादलों से धरा पर,
करोड़ों सबल मुक्त हाथों से मल कर,
युगों की पुती कालिमा सख़्त धो ली !
मिलाये क़दम से क़दम, गीत गाती,
बढ़ी जा रही है जवानों की टोली !
जवानों की टोली !

.
(147) तसवीरें
.
दूर कहीं पर
सामूहिक गर्जन-स्वर का
मेरे नभ की उन्मुक्त-तरंगों में कंपन !
सुबह-सुबह महसूस हुआ ऐसा
कुछ बदल गयी है दिल की धड़कन !
.
शायद फिर मौसम बदला है,
बर्फ़ हिमालय का पिघला है !
.
आज तभी तो
गंगा-यमुना की धाराएँ अँगड़ाईं !
चट्टानों को तोड़ रहीं
जाने कितना अंतर में जीवन भर लायीं !
.
पूरब के स्वाधीन समुद्रों में अब
डोल उठे अरमान नये,
तूफ़ान नये !
जिनके बारे में सुन तो रक्खा था
पर, वे इस धरती को
छूते देखे नहीं गये।
.
आज सुबह के आसमान में
आभास उन्हीं का पाया,
मानों सत्य खड़ा हो सम्मुख
छिन्न-भिन्न करके माया !
हलके-हलके कुछ बादल छाये थे
जिनमें मैंने देखे चित्रा अनेकों —
जैसे कोई सरमाया का भूत
नये इंसानों के क़दमों के नीचे
दम तोड़ रहा है !
मैंने देखा जैसे कोई
भूखों, नंगों, पददलितों को
नंदन वन में छोड़ रहा है !
मैंने देखा जैसे कोई
पंक्ति कपोतों की
ख़ुश-ख़बर सुनाने आयी है !
मैंने देखा जैसे कोई
गेहूँ की बालें बिखर-बिखर कर छायी हैं !
.
इन चित्रों ने मुझको दृढ़ विश्वास दिया है,
जीवन-संघर्षों में अभिनव उल्लास दिया है,
श्रमजीवी जनता की
ताक़त का आभास दिया है !
आज वही तसवीरें
नभ पर प्रतिबिम्बत हैं !
.
आज वही तसवीरें

जन-जन के मन पर अंकित हैं !
आज उन्हीं तसवीरों को
धरती रखने को लालायित है !
.
• •
(148) बहुतेरे
.
आज सबेरा होता है
पर, बहुतेरे सोते हैं,
काट रहे जन आज फ़सल
पर, बहुतेरे रोते हैं !
.
आज नयी गंगा बहती
पर, बहुतेरे प्यासे हैं,
चातक से बन इस जल को
पीना घातक कहते हैं !
.
आज नयी जो चली हवा
इन खेतों-खलिहानों पर,
जन-जन लेते साँस मुक्त
पर, बहुतेरे रहे सिहर !
.
आज नया संसार बना
पर, कुछ कलियुग समझ रहे,
डर अपनी परछाईं से
अपने में ही उलझ रहे !
.
• •
(149) पुनर्निर्माण
.
उद्धारक लगा रहे आवाज़ —
'पुनर्निर्माण करो,
पुनरुत्थान करो,
चिर-खंडित नष्टप्राय संस्कृति का,
आदिम युग के आदर्शों का !'
.
बीते वर्षों के रीते घट,
तम के पट पर विगत युगों की
सभ्यता, कला म्लान आज,
ढह गया महान पुरातन !
'जीवन-सत्यों' की लिपि
धुल गयी अरे !
फिर से बुझे दीप को आज जलाओ,
मानवता की उस दबी राह को
खोदो ! (खो दो !)
.
इस नवीन ज्योति की चकाचैंध में
आँखें पथराईं-सी,
इसको हलका करना यदि
तो फिर से दबा अँधेरा फेंको !
जिससे धर्मान्ध मनुष्यों की,

सामन्तों-पूँजीपतियों की,
राजा, थोथे नेताओं की
झूठी क़लई पर आग न आये,
आँच न आये !
डर है —
कि कहीं झूठा रंग उतर ना जाये !
.
बुद्धि अगर बढ़ जाएगी
तो शेरों की खालों में
छिपे हुए गीदड़
अब और न जीवित रह पाएंगे !
इसीलिए आज पुनर्निर्माण करो -
नूतन संस्कृति के
इस उगते तेज़ उजाले पर
अंधकार से
पुनरुत्थान से प्रहार करो !
.
• •
(150) नयी चेतना
.
आँधियाँ फिर से क्षितिज पर
मुक्त मँडराने लगीं !
जन-सिन्धु में हलचल नयी,
अँगड़ाइयाँ भर सुप्त लहरें
व्याघ्र-स्वर करती जगीं !
.
दूर का प्रेरक बड़ा उद्गम
रुकावट चीर कर,
चट्टान का उर भेद कर,
शायद
गरजता बढ़ प्रवाह गया !
कर लिया संचित सुदृढ़ बल फिर
अथक दुर्दम नया !
है तभी तो युग तुम्हारे
प्राण में उत्साह, जीवन, स्नेह, धड़कन !
मरकुरी-सी ज्योति
.
आगत युग-नयन की,
दूर है धुँधली सभी छाया सपन की !
ढीर जड़ता की गयी गिर,
तुम तभी तो देख लेते हो
छिपे अगणित विरोधी,
और उनको भी
बदल कर भेष अपना
जो तुम्हारे साथ होने का
सरासर झूठ खुफ़िया-सा वचन
विश्वास का तुमको सुनाते हैं !
.
सभी ये जन-विरोधी शक्तियाँ

जब मिल गयीं
लख कर निजी हित
और जर्जर 'इन्क़लाबी गीत' से
संसार को
नव-पथ-दिशा से रोक
भरमाने लगीं,
सम्मुख तभी तो
आँधियाँ फिर से क्षितिज पर
आज मँडराने लगीं !
.
संघर्ष-ज्वाला की प्रखर लपटें
पुनः अविश्रान्त लहराने लगीं ।
.
• •
(151) विनाश-लील
(उद्जन-बम विस्फोट पर)
.
डॉलर-मद से मतवाले मानव के
हाथों में उद्जन-बम है,
रे नयी व्यवस्था के निर्माता
सावधान !
रे जनयुग के आकांक्षी
सावधान !
समता, शान्ति, न्याय-प्रिय मानव
सावधान !
.
यह मानवता का रक्षक कहलाने वाला
अभी-अभी उद्जन-बम से
बिकनी टापू पर खेल चुका है,
जिसका गरलाक्त धुआँ
सम्पूर्ण प्रशान्त-महासागर में फैल चुका है !
यह वही हिमायती प्रजातन्त्रा का
जिसने नागासाकी, हिरोशिमा पर
अणु-बम बरसाये थे,
जिसने जापानी-इन्सानों पर चढ़
फूहड़ मृत्यु-गीत गाये थे,
मानवता के उर्वर खेतों पर
जिसने कोढ़ उगाया था,
जिसने दिशा-दिशा में
अग्नि-कुहर बरसाया था !
वही आज फिर
उद्जन बम को तोल रहा है !
फूहड़ मृत्यु गीत गाने
मुख खोल रहा है !
जिसकी प्रारम्भिक गति से ही
ईथर में मानव-ग्रह डोल रहा है !
रे जीवन के शिल्पी
सावधान,
सुख-स्वप्नों के दर्शी

सावधान,
मुसकानों के प्रेमी
सावधान !

.

• •

(152) बन्द करो

.

भूखों-नंगों दुखियारों की,
मानव-अधिकारों की
आवाज़ नहीं है यह !
भाई-चारे का सच्चा भाव नहीं है यह !
तूफ़ानी सागर में उलझे मानव की
उद्धारक नाव नहीं है यह !

.

जब संस्कृति की नंगी लाश
तुम्हारे हाथों में है,
लाखों इंसानों का ख़ून
तुम्हारे दाँतों में है
अस्मत-भक्षी दुर्गन्ध
तुम्हारी साँसों में है,
तुम करते हो
मानव-अधिकारों की बात ?
मज़लूमों की छाती पर
कर फ़ौलादी जूतों के आघात !

.

बस,
अपने नापाक इरादों के
नारों को बन्द करो !
शोषित दुनिया के ऊपर से
गुज़र गयी है रात !
जागृति की वर्षा होती है
कागज़ की दीवारों पर
मत नक़ली रंग भरो !

.

मानव-अधिकारों की
आवाज़ लगाने वाले उट्ठे हैं,
अब महल
तुम्हारी थोथी मानवता का
ढह जाएगा !
जिस पर चढ़ कर ;
समता का गीत नया
हर मानव निर्भय गाएगा !

.

• •

(153) आज

.

दिन-पर-दिन होता साकार हमारा सपना,
सार्थक होगा निश्चय युग-ज्वाला में तपना !
कल तक जो धुँधला-धुँधला-सा था दूर बहुत,
वह लक्ष्य हमारा आज निकट नव-आभा-युत !

.
कल तक जो हमको शंका से देख रहे थे,
और हमारे यश पर कीचड़ फेंक रहे थे,
समता-संस्थापन में आ रोड़े अटकाए,
व्यर्थ हमारे पथ पर आये दाएँ-बाएँ !
.
आज वही पहचान रहे मानवता की गति,
छोड़ रहे गत जर्जर-मिथ्या-युग के प्रति रति,
सीख रहे अभिनव आदर्शों को अपनाना,
कर्कश स्वर की जगह मधुर-जीवन का गाना !
.
• •
(154) मज़लूम
.
सारे जग का सोया जन-सागर
जब अभिनव स्वर सुनकर उठा सिहर,
सबने समझा —
कहीं गिरी है ध्वंसक गाज
पर, वह तो गरजी थी मज़लूमों की आवाज़ !
.
शोषक-दुर्गों को दृढ़ दीवारें
तड़कीं केवल कंपन के मारे,
सबने समझा —
भूडोल उठा है दुर्दम
पर, वे तो थे मज़लूमों के कुछ कूच-क़दम !
.
• •
(155) श्रमिक
.
टिकी नहीं है
शेषनाग के फन पर धरती !
हुई नहीं है उर्वर
महाजनों के धन पर धरती !
सोना-चाँदी बरसा है
नहीं ख़ुदा की मेहरबानी से,
दुनिया को विश्वास नहीं होता है
झूठी ऊलजलूल कहानी से !
.
सारी ख़ुशहाली का कारण,
दिन-दिन बढ़ती
वैभव-लाली का कारण,
केवल श्रमिकों का बल है !
जिनके हाथों में
मज़बूत हथौड़ा, हँसिया, हल है !
जिनके कंधों पर
फ़ौलाद पछाड़ें खाता है,
सूखी हड्डी से टकराकर
टुकड़े-टुकड़े हो जाता है !
.
इन श्रमिकों के बल पर ही
टिकी हुई है धरती,

इन श्रमिकों के बल पर ही
दीखा करती है
सोने-चाँदी की 'भरती' !
.
इनकी ताक़त को
दुनिया का इतिहास बताता है !
इनकी हिम्मत को
दुनिया का विकसित रूप बताता है !
सचमुच, इनके क़दमों में
भारीपन खो जाता है !
सचमुच, इनके हाथों में
कूड़ा-करकट तक आकर
सोना हो जाता है।
.
इसीलिए
श्रमिकों के तन की क़ीमत है !
इसीलिए
श्रमिकों के मन की क़ीमत है !
श्रमिकों के पीछे
दुनिया चलती है ;
जैसे पृथ्वी के पीछे चाँद
गगन में मँडराया करता है !
श्रमिकों से
आँसू, पीड़ा, क्रंदन,
दुःख-अभावों का जीवन
घबराया करता है !
श्रमिकों से
बेचैनी औ' बरबादी का अजगर
आँख बचाया करता है !
.
इनके श्रम पर ही निर्मित है
संस्कृति का भव्य-भवन,
इनके श्रम पर ही आधारित है
उन्नति-पथ का प्रत्येक चरण !
.
हर दैविक-भौतिक संकट में
ये बढ़ कर आगे आते हैं,
इनके आने से
त्रास्त करोड़ों के आँसू
थम जाते हैं !
भावी विपदा के बादल
फट जाते हैं !
पथ के अवरोधी-पत्थर
हट जाते हैं !
जैसे
विद्युत-गतिमय-इंजन से टकरा कर
प्रतिरोधी तीव्र हवाएँ
सिर धुन-धुन कर रह जाती हैं !

पथ कतरा कर बह जाती हैं !
.
श्रमधारा कब
अवरोधों के सम्मुख नत होती है ?
कब आगे बढ़ने का
दुर्दम साहस क्षण भर भी खोती है ?
सपनों में
कब इसका विश्वास रहा है ?
आँखों को मृग-तृष्णा पर
आकर्षित होने का
कब अभ्यास रहा है ?
.
श्रमधारा
अपनी मंज़िल से परिचित है !
श्रमधारा
अपने भावी से भयभीत न चिंतित है !
.
श्रमिकों की दुनिया बहुत बड़ी !
सागर की लहरों से लेकर
अम्बर तक फैली !
इनका कोई अपना देश नहीं,
काला, गोरा, पीला भेष नहीं !
सारी दुनिया के श्रमिकों का जीवन,
सारी दुनिया के श्रमिकों की धड़कन
कोई अलग नहीं !
कर सकती भौगोलिक सीमाएँ तक
इनको विलग नहीं !
.
• •
(156) मानव-समता का त्योहार
.
जब तक जग के कोने-कोने में
न थमेगा
सामाजिक घोर विषमता का
बहता ज्वार,
हर श्रमजीवी तब तक
अविचल मुक्त मनाएगा
'मई-दिवस' का त्योहार !
मानव-समता का त्योहार !
.
वह मई-माह की पहली तारीख़
अठारह-सौ-छियासी सन् की,
जब अमरीका के शहरों में
मज़दूरों की टोली
विद्रोही बनकर निकली !
देख जिसे
थर-थर काँपी थी पूँजीवादी सरकार,
पशु बनकर मज़दूरों पर
जिसने किये दमन-प्रहार !

पर, बन्द न की जनता ने
अपने अधिकारों की आवाज़,
भर लेता था उर में
उठती स्वर-लहरों को आकाश !
.
वह बल था
जो धरती से जन्मा था,
वह बल था
जो संघर्षों की ज्वाला से जन्मा था,
वह बल था
जो पीड़ित इंसानों के प्राणों से जन्मा था !
.
फिर सोचो, क्या दब सकता था ?
पिस्तौल, मशीनगनों से क्या मिट सकता था ?
बढ़ता रहा निरन्तर
श्रमिकों का जत्था सीना ताने,
होठों पर थे जिसके
आज़ादी के, जीवन के प्रेरक गाने !
जिन गानों में
दुनिया के मूक ग़रीबों की
आहें और कराहें थीं,
जिन गानों में
दुनिया के अनगिनती मासूमों के
जीवन की चाहें थीं !
आहें और कराहें कब दबती है ?
जीवन की चाहें कब मिटती हैं ?
टकराया है मानव जोंकों से
और भविष्यत् में भी टकराएगा !
.
वह निश्चय ही
सद्भावों को वसुधा पर लाएगा !
वह निश्चय ही
दुनिया में समता, शान्ति, न्याय का
झंडा ऊँचा रक्खेगा !
मानव की गरिमा को जीवित रक्खेगा !
.
• •
(157) ओ मज़दूर-किसानो!
.
कवि : ओ, मज़दूर - किसानो !
अपना पथ पहचानो !
.
श्रमजीवी गण : हुआ युगों से शोषण,
जकड़े अगणित बंधन !
.
बालक : अधनंगे हैं निर्धन !
.
औरतें : दुख और अभावों में
काट रहे हैं जीवन !
.

कवि : बदल चुका है जग में
आज ज़माना, मानों !
ओ, मज़दूर-किसानो !
अपना पथ पहचानो !

.

बालक : हम हैं सोये भूखे,
खा कुछ टुकड़े सूखे !

.

औरतें : स्वाभिमान खंडित
पग - पग अपमानित,
छाया तिमिर घना
जीवन भार बना !

.

कवि : अब हुआ नया प्रभात !
छिन्न अंध - ग्रस्त - रात !
अब हुआ नया प्रभात !

.

श्रमजीवी : यह सरमायादारी ?
यह क्रूर ज़मीदारी ?
.....
निर्दयी शिकारिन बन
धर कर रूप पिशाचिन

.

(समवेत) : टूटी हम पर !
टूटी हम पर !

.

कवि : अब भय की बात नहीं !
मिटने का उनका क्षण
आया है आज यहीं !
अब भय की बात नहीं !
जागो, जागो !
ओ, युग-युग से सोये
जन-जन के अरमानो ं !
ओ, मज़दूर - किसानो !
अपना पथ पहचानो !

.

सहगान : हाँ,
दूर क्षितिज पर आशा के घन,
घिरता जाता प्रतिक्षण
पूर्ण गगन !
नव-जीवन का संदेश सनातन
गूँज रहा जिससे
जग का कण-कण !

.

कवि : लो,
बंधन का भार ढहा जाता,
युग
मुक्त-नया-संगीत सुनाता !

.

सहगान : हम अभिनव रूप

निहार रहे,
उजड़ा तन-मन
आज सँवार रहे !
हम पहचान चलेंगे
अपनापन,
कोई बाँध न पाएगा लोचन!
फूटा
स्वर्ण-विहान !
हम मज़दूर-किसान !

.

• •

(158) अकेला नहीं हूँ !

.

अकेला नहीं हूँ,
अकेला नहीं हूँ,
ज़माना नया साथ है,
और मैं भी
बड़ी ही खुशी से
सदा साथ उसके !

.

करोड़ों भुजाएँ
मुझे आज बल दे रही हैं,
अथक शक्ति मेरी
बिना रोक के ले रही हैं !
अनेकों क़दम गिर्द मेरे
निरंतर चले जा रहे हैं,
बढ़े जा रहे हैं !
निराशा नहीं है,
निराशा नहीं है!

.

किसी भी तरह की विवशता नहीं है !
रुकावट ठहरती न
जन-धार के सामने
सब उखड़ती चली जा रही हैं !
कि पिघला बरफ़
किस हिमालय-शिखर का ?
नयी भूमि को जो
बनाये चला जा रहा है,
निडर शान्त बस्ती
बसाये चला जा रहा है !
हरा, लाल, पीला, गुलाबी चमन
आज उसी ने खिलाया,
मनुज को मनुजता बतायी,
दबे चेहरे की
गिरे चेहरे की
चमक भी बढ़ायी !
उसी ज़िन्दगी से मिलाओ चरण !
और हँस-हँस
उसी ज़िन्दगी से लड़ाओ नयन !

.

• •

(159) जवानी

.

समय तो गुज़रता चला जायगा
पर, जवानी कभी भी मिटेगी नहीं !

.

करोड़ों युगों से
जवानी का दरिया
हज़ारों रुकावट मिटाकर
निरंतर बहा है,
व बहता रहेगा !

.

करोड़ों युगों से
जवानी का सरगम
नयी ज़िन्दगी का
नया गीत गाता रहा है,
व गाता रहेगा !

.

कि झंकार जिसकी
कभी भी दबेगी नहीं,
और
नभ में, दिशा में,
नगर में, डगर में,
बड़े शोर से गूँज
सबको जगाती रहेगी !

.

व सपनों की दुनिया
अँधेरे की दुनिया
सदा लड़खड़ाती रहेगी !
अँधेरा गिरेगा, अँधेरा मिटेगा,
कभी पर,
जवानी की ज्योति धुँधली पड़ेगी नहीं !

.

समय तो गुज़रता चला जायगा
पर, जवानी कभी भी मिटेगी नहीं !

.

• •

(160) ज्योति-पर्व

.

मिट्टी के लघु-लघु दीपों से
जगमग हर एक भवन !

.

अँधियारे की लहरों से भूमि भरी,
पर, उस पर तिरती झलमल ज्योति-तरी,
जलना है, चाहे हो जाये
तारक-शशि हीन गगन !

.

जग पर छायी धूमिल वाष्प असुन्दर,
पर, बहता है अविरल स्नेह-समुन्दर,
युग के मन-मरुथल में तुमको

रहना है भाव-प्रवण !

.

विशृंखल तेज़ प्रभंजन से संसृति,
पर, मुसकाती संग नयी बन आकृति,
टूटेगा बाँध प्रलय का जब
हर नूतन सृष्टि चरण !

.

कोलाहल हर कोने से फूट रहा,
अब तो सपनों का बंधन टूट रहा,
खो जाएगा नव-जीवन की
हलचल में क्षीण मरण !

.

• •

(161) बिजलियाँ गिरने नहीं देंगे !

.

कुछ लोग
चाहे ज़ोर से कितना
बजाएँ युद्ध का डंका
पर, हम कभी भी
शांति का झंडा
ज़रा झुकने नहीं देंगे !
हम कभी भी
शांति की आवाज़ को
दबने नहीं देंगे !

.

क्योंकि हम
इतिहास के आरम्भ से
इंसानियत में,
शांति में
विश्वास रखते हैं,
गौतम और गांधी को
हृदय के पास रखते हैं !

.

किसी को भी सताना
पाप सचमुच में समझते है,
नहीं हम व्यर्थ में पथ में
किसी से जा उलझते हैं !

.

हमारे पास केवल
विश्व-मैत्री का
परस्पर प्यार का संदेश है,

.

हमारा स्नेह -—
पीड़ित ध्वस्त दुनिया के लिए
अवशेष है !
हमारे हाथ -—
गिरतों को उठाएंगे,
हज़ारों

मूक, बंदी, त्रस्त, नत,
भयभीत, घायल औरतों को
दानवों के क्रूर पंजों से बचाएंगे !
.
हमें नादान बच्चों की हँसी
लगती बड़ी प्यारी ;
हमें लगती
किसानों के
गड़रियों के
गलों से गीत की कड़ियाँ
मनोहारी !
.
खुशी के गीत गाते इन गलों में
हम
कराहों और आहों को
कभी जाने नहीं देंगे !
हँसी पर ख़ून के छींटें
कभी पड़ने नहीं देंगे !
.
नये इंसान के मासूम सपनों पर
कभी भी बिजलियाँ गिरने नहीं देंगे !
.
(162) ललकार
.
शैतान के साम्राज्य में तूफ़ान आया है,
जो ज़िन्दगी को मुक्ति का पैग़ाम लाया है !
इंसान की तक़दीर को बदलो,
भयभीत हर तस्वीर को बदलो,
हमारे संगठित बल की यही ललकार है !
.
मासूम लाशों पर खड़ा साम्राज्य हिलता है,
तम चीर कर जन-शक्ति का सूरज निकलता है,
चट्टान जैसे माथ उठते हैं,
फ़ौलाद से दृढ़ हाथ उठते हैं,
अमन के शत्रु से जो छीनते हथियार हैं !
हमारे संगठित बल की यही ललकार है !
.

लो रुक गया रक्तिम प्रखर सैलाब का पानी,
अब दूर होगी आदमी की हर परेशानी !
सूखी लताएँ लहलहाती हैं,
नव-ज्योति सागरमें नहाती हैं,
खुशी के मेघ छाये हैं, बरसता प्यार है !
हमारे संगठित बल की यही ललकार है !
.
(163) आज़ादी का त्योहार
.

लज्जा ढकने को
मेरी खरगोश सरीखी भोली पत्नी के पास
नहीं हैं वस्त्र,
कि जिसका रोना सुनता हूँ सर्वत्र !
घर में, बाहर,
सोते-जगते
मेरी आँखों के आगे
फिर-फिर जाते हैं
वे दो गंगाजल जैसे निर्मल आँसू
जो उस दिन तुमने
मैले आँचल से पोंछ लिए थे !
.
मेरे
दोनों छोटे मूक खिलौनों-से दुर्बल बच्चे
जिनके तन पर गोश्त नहीं है,
जिनके मुख पर रक्त नहीं है,
अभी-अभी लड़कर सोये हैं,
रोटी के टुकड़े पर,
यदि विश्वास नहीं हो तो
अब भी
तुम उनकी लम्बी सिसकी सुन सकते हो
जो वे सोते में
रह-रह कर भर लेते हैं !
.
जिनको वर्षा की ठंडी रातों में,
मैं उर से चिपका लेता हूँ,
तूफ़ानों के अंधड़ में
बाहों में दुबका लेता हूँ !
.
क्योंकि
नये युग के सपनों की ये तस्वीरें हैं !
बंजर धरती पर
अंकुर उगते धीरे-धीरे हैं !
.
इनकी रक्षा को
आज़ादी का त्योहार मनाता हूँ !
अपने गिरते घर के टूटे छज्जे पर
कर्ज़ा लेकर
आज़ादी के दीप जलाता हूँ !
अपने सूखे अधरों से
आज़ादी के गाने गाता हूँ !
क्योंकि
मुझे आज़ादी बेहद प्यारी है !
मैंने अपन हाथों से
इसकी सींची फुलवारी है !
.
पर,

सावधान ! लोभी गिद्धो !
यदि तुमने इसके फल-फूलों पर
अपनी दृष्टि गड़ाई,
तो फिर
करनी होगी आज़ादी की
फिर से और लड़ाई !

.

• •

(164) अपराजित

.

हो नहीं सकती पराजित युग-जवानी !

.

संगठित जन-चेतना को,
नव-सृजन की कामना को,
सर्वहारा-वर्ग की युग -
युग पुरानी साधना को,
आदमी के सुख-सपन को,
शांति के आशा-भवन को,
और ऊषा की ललाई
से भरे जीवन-गगन को,
मेटने वाली सुनी है क्या कहानी ?
हो नहीं सकती पराजित युग-जवानी !

.

पैर इस्पाती कड़े जो
आँधियों से जा लड़े जो,
हिल न पाये एक पग भी
पर्वतों से दृढ खड़े जो,
शत्रु को ललकारते हैं,
जूझत हैं, मारते हैं,
विश्व के कर्तव्य पर जो
ज़िन्दगी को वारते हैं,
कब शिथिल होती, प्रखर उनकी रवानी !
हो नहीं सकती पराजित युग-जवानी !

.

शक्ति का आह्वान करती,
प्राण में उत्साह भरती,
सुन जिसे दुर्बल मनुज की
शान से छाती उभरती,
जो तिमिर में पथ बताती,
हर दिशा में गूँज जाती,
क्रांति का संदेश नूतन
जा सितारों को सुनाती,
बंद हो सकती नहीं जन-त्राण-वाणी !
हो नहीं सकती पराजित युग-जवानी !

.

• •

(165) चेतना

.

हर दिशा में जल उठी ज्वाला नयी,
लालिमा जीवन-जगत पर छा गयी !
.
है नयी पदचाप से गुंजित मही,
ज्योति अभिनव हर किरण बिखरा रही !
.
छिन्न सदियों का अँधेरा हो गया,
राह पर जगमग सबेरा है नया !
.
यह विगत युग का न कोई साज़ है,
रूप ही बदला धरा ने आज है !
.
वर्ग-भेदों को मिटाने चेतना
कर रही सामान्य की आराधना !
.
काल बदला और बदली सभ्यता,
दे रही नव फूल संस्कृति की लता !
.
फूल वे जिनमें मधुर सौरभ भरा,
मुसकराती पा जिन्हें भू-उर्वरा !
.
स्वार्थ, शोषण की इमारत ढह रही,
भग्न ढूहों पर सृजन-सरि बह रही !
.
शीत के लघु-ताप से सिकुड़े हुओं,
पास आता जा रहा 'क्यूरो सिवो' !
.
धूप से झुलसे हुए 'होरी' कृषक
आ रही 'जल की हवा' जीवन-जनक !
.
उर लगाले जीर्ण 'धनिया'-देह को
(रोक ले रे ! छलछलाते स्नेह को !)
.
आज तो आकाश अपना हो गया,
आदमी का, सत्य सपना हो गया !
.
•  •
(166) काटो धान
.
काटो धान, काटो धान,
काटो धान !
.
सारे खेत
देखो
दूर तक कितने भरे,
कितने भरे
पूरे भरे !

.
घिर लहलहाते हीं
न फूले रे समाते हैं !
.
हवा में मिल
कुसुम-से खिल
.
उठो,
आओ,
चलो,
इन जीर्ण कुटियों से
बुलाता है तुम्हें, साथी
खुला मैदान !
काटो धान, काटो धान
काटो धान !
.
जब हिम-नदी का
चू पड़ा था जल
अनेकों धार में चंचल,
हिमालय से
बहायी जो गयी थी धूल
उसमें आज
खिलते रे
श्रमिक तेरे पसीने से सिँचे
प्रति पेड़ की हर डाल में
सित, लाल, पीले, फूल !
.
जीन के लिए देती तुम्हें
ओ ! आज भू माता
सहज वरदान !
काटो धान, काटो धान,
काटो धान !
.

आकाश में जब
घिर गये थे
मॉनसूनी घन
सघन काले,
हृदय सूखे हुए
तब आश-रस से
भर गये थे
झूम मतवाले !
.
किसी
सुन्दर, सलोनी, स्वस्थ, कोमल, मधु
किशोरी के नयन
कुछ मूक भाषा में

नयी आभा सजाए
जगमगाए श्वेत-कजरारे !
.
हुए साकार
भावों से भरे
अभिनव सरल जीवन लिए,
नूतन जगत के गान !
काटो धान, काटो धान,
काटो धान !
.

जो
सृष्टि के निर्माण हित बोए
तुम्हारी साधना ने बीज थे
वे पल्लवित
सपने पलक की छाँह में
पा चाह
शीतल ज्योत्स्ना की गोद में खेले !
(अरी इन डालियों को बाँह में ले ले !)
.
उठो !
कन्या-कुमारी से
अखिल कैलाश के वासी
सुनो,
गूँजी नयी झंकार !
हर्षित हो
उठो !
परिवार सारे गाँव के
देखो
कि चित्रित हो रहे अरमान !
काटो धान, काटो धान
काटो धान !
.
टूटे दाँत
सूखे केश,
मुख पर
झुर्रियों की वह सहज मुसकान!
.
प्रमुदित मुग्ध
फैला विश्व में सौरभ
महकता नभ!
.
सजग हो आज
मेर देश का अभिमान !
काटो धान, काटो धान,
काटो धान !
.

•  •

(167) रोक न पाओगे

.

जग में आज सुनायी देती आवाज़ नयी,
जिसकी प्रतिध्वनि भू के कण-कण में गूँज गयी !

.

समझ गये शोषित-पीड़ित जिसका अर्थ सभी,
अब तो जन-शक्ति-विपथ के साधन व्यर्थ सभी !

.

मूक जनों को आज गिरा का वरदान मिला,
श्रमजीवी-जन को अपना प्यारा गान मिला,

.

युग-युग की अवरुद्ध उपेक्षित नव-राह खुली,
जन-पथ के सब द्वार खुले, जग-जनता निकली !

.

विजयी घोषों से फट-फट पड़ती है तुरही,
काँप रहा है आज गगन, काँपी आज मही !

.

विशृंखल; वर्गों की निर्मित सारी कड़ियाँ,
देश-काल की अब सीमा मिटने की घड़ियाँ !

.

नक़ली दीवारो ! नहीं रुकगी नयी हवा ,
बस, कर दो राह कि बचने की है यही दवा !

.

जर्जर संस्कृति के रक्षक भागो ! आग लगी !
इन अँगारों से तो लपटों की धार जगी !

.

इसको और हृदय से चिपटाना घातक है,
आसक्ति, तुम्हारी ही काया की भक्षक है !

.

•  •

(168) जागते रहेंगे

.

आग बन गया
उपेक्षितों का वर्ग ;
कि ढह रहा प्रवंचना का दुर्ग !
पत्थरों के कोयले
धधक उठे,
लपट मशाल बन
हवा के संग
अंधकार पर प्रहार कर रही !

.

जगमगा उठी
दमित युगों की रात;
पर्व है 'नुशूर' का —
मृतक शरीर कब्र फोड़
जागता है नींद छोड़ !

.

जंगलों के पेड़
खड़खड़ा उठे !
ये आँधियाँ हैं
जो कभी उड़ी नहीं,
ये बिजलियाँ हैं
जो कभी गिरी नहीं,
कि बदलियाँ गभीर
जो कभी घिरी नहीं !
गरज से कड़कड़ा रहा
दंत पीस क्रुद्ध दिग-दिगन्त !
संगठित समूह की दहाड़ से
नये समाज में
तमाम शोषकों के कागज़ी पहाड़,
राख हो रहे !
कि जड़ समेत सब उखड़
हवा के तामसी महल
सहज में
ख़ाक हो रहे !
.
यह आग है कि
बर्फ़ की तहों से दब न पायगी,
कि क्षिप्र जल की धार से
कभी भी बुझ न पायगी !
जब तलक है
अंधकार शेष इस ज़मीन पर
तब तलक
अमीर खटमलों-सा
चूसता रहेगा निर्धनों का रक्त !
हर गली में
भूत की डरावनी हँसी
निराट गूँजती रहेगी
तब तलक !
.
प्रसुप्त
प्रस्तरों की चादरों को छोड़,
प्रांशु भाल,
प्राज्य शक्ति,
ध्रुव प्रतीति ले
उठा रहा प्रहारना का अस्त्र !
है असाँच-गर्व मृत,
असार
अस्तमन, विधुर, विपन्न ;
अब विभीषिका-विभावरी
विभास से विभीत पिंगला !
.
नवीन ज्योति का
सशक्त कारवाँ चला,

कि गिर रहा है टूट-टूट कर
क़दम-क़दम पर अंधकार !
जागते रहेंगे हम,
कि जब तलक
यह रुद्ध-राह-द्वार
खुल न जायगा,
यह वर्ग-भेद, जाति-द्वेष
मिट न जायगा,
हमारी धमनियों में
ख़ून खौलता रहेगा
तब तलक !

.

•  •

(169) नया इंसान

.

आज नया इंसान, पड़ी चरणों की, तोड़ रहा ज़ंजीर !

.

उबल उठा है स्वस्थ युगों की ताक़त का उन्माद,
जन-जन के बंदी जीवन को करने को आज़ाद,
उजड़े ध्वस्त घरों को फिर से करना है आबाद,
आगे बढ़ना है सदियों का छाया सघन अँधेरा चीर !
आज नया इंसान, पड़ी चरणों की, तोड़ रहा ज़ंजीर !

.

हिलते महलों की दीवारों से आती आवाज़,
भय से ग्रस्त कि मानों हो ही गिरने वाली गाज,
मिटने वाला है अब जग का शोषक-जीर्ण-समाज,
निश्चय, अब रह न सकेंगे दुनिया में आदमख़ोर अमीर !
आज नया इंसान, पड़ी चरणों की, तोड़ रहा ज़ंजीर !

.

जन-बल के क़दमों की आहट से गूँजा संसार,
दुर्बल बन दुश्मन का वक्ष दहलता है हर बार,
खुलते जाते अवरुद्ध-पंथ के लो सारे द्वार,
अब धार नहीं बाक़ी, खा ज़ंग गयी सामंती-शमशीर !
आज नया इंसान, पड़ी चरणों की, तोड़ रहा ज़ंजीर !

.

सत्य प्रखर अब सम्मुख आया, जीत गया विश्वास,
वांछित नवयुग पास कि लुप्त हुआ पिछला आभास,
अब रखनी न सुरक्षित मन में कोई खोयी आस,
दुनिया के परदे पर, हर मानव की आज नयी तसवीर !
आज नया इंसान, पड़ी चरणों की, तोड़ रहा ज़ंजीर !

.

•

(170) आँधी

.

बड़ा शोर करती उठी आज आँधी,
क्षितिज-से-क्षितिज तक घिरी आज आँधी !

.

समुन्दर जिसे देखकर खिलखिलाया,

निखिल सृष्टि काँपी प्रलय-भय समाया !

.

पुराने भवन सब गिरे लड़खड़ाकर,
बड़ी तेज़ आयीं हवाएँ हहर कर !

.

दिवाकर किसी का छिपा थाम दामन,
दहलता भयावह बना विश्व-आँगन !

.

उमड़ता नये जोश में वन्य-दरिया,
लहरता नवल होश में वन्य-दरिया !

.

रुकेगी न आँधी सरीखी जवानी,
बना कर रहेगी नयी ही कहानी !

.

असम्भव कि ठहरे रुकावट पुरानी,
शिथिल हो न पायी कभी भी रवानी !

.

न रोके रुकेगी बड़ी शक्तिशाली,
न फीकी पड़ेगी कभी द्रोह लाली !

.

कि चीलें उतरती चली आ रही हैं,
अँधेरी घटाएँ घुमड़ छा रही हैं !

.

मगर खोल सीना अकेला डगर पर
बढ़ा जा रहा जूझता जो निरन्तर,

.

वही व्यक्ति दृढ़ शक्ति-युग का तरुण है,
बदलना धरा को कि जिसकी लगन है !

.

विरोधी रुकावट मिटाता चला जो,
नदी शांति की नव बहाता चला जो,

.

वही क्रांति आभास-दृष्टा सदा से,
वही विश्व-इतिहास-स्रष्टा सदा से,

.

उसी की सबल मुक्त लंबी भुजाएँ
नये ख़ून से मोड़ देंगी हवाएँ !

.

•  •

(171) झंझावात

.

पूरब में
नयी जन-चेतना का
आज  झंझावात आया है !
अमिट विश्वास ने
इंसान के उर में,
बड़ा मज़बूत

अपना घर बनाया है !

.

तभी तो —
दुश्मनों के शक्तिशाली दुर्ग पर
क्रोधित हवाएँ
दौड़तीं ललकारतीं
जा जूझ टकरायीं,
कि जिससे दुर्ग के
प्राचीर, गुम्बज, कोट
होते हैं धराशायी !

.

उभरती शक्ति जनता की
दबाये अब नहीं दबती,
धधकती द्रोह की ज्वाला
बुझाये अब नहीं बुझती !
अथक संघर्ष चारों ओर
नूतन ज़िन्दगी का है,
कि नूतन ज़िन्दगी वह जो
मिटाये मिट नहीं सकती !

.

गगन को घेर कर
चिनगारियाँ जिसकी
चमकती और उड़ती हैं,
उसी के ताप से
फ़ौलाद की दृढ़ शृंखलाएँ दृप्त
मुड़ती हैं !
बड़ी गहरी घटाएँ
आसमानों पर घुमड़ती हैं !

.

न सरकेगी कभी चट्टान
जिस पर उठ रही
दुर्भेद्य नव दीवार !
हिंसक भेड़ियों
नंगे लुटेरों की
कहीं नीचे दबी है लाश !
होगी सर्वहारा-वर्ग की
निश्चय सुरक्षा;
क्योंकि
आया आज पूरब में
नयी जन-चेतना का
तीव्र झंझावात !

.

• •

(172) नव-निर्माण

.

मैं निरंतर राह नव-निर्माण करता चल रहा हूँ
और चलता ही रहूँगा !

.
राह — जिस पर कंटकों का
जाल, तम का आवरण है,
राह — जिस पर पत्थरों की
राशि, अति दुर्गम विजन है,
राह — जिस पर बह रहा है
टायफ़ूनी - स्वर - प्रभंजन,
राह — जिस पर गिर रहा हिम
मौत का जिस पर निमंत्रण,
मैं उसी पर तो अकेला दीप बनकर जल रहा हूँ,
और जलता ही रहूँगा !
मैं निरंतर राह नव-निर्माण करता चल रहा हूँ,
और चलता ही रहूँगा !
.
आज जड़ता-पाश, जीवन
बद्ध, घायल युग-विहंगम,
फड़फड़ाता पर, स्वयं
प्राचीर में फँस, जानकर भ्रम,
मौन मरघट स्तब्धता है
स्वर हुआ है आज कुंठित,
सामने बीहड़ भयातंकित
दिशाएँ कुहर गुंठित,
विश्व के उजड़े चमन में फूल बनकर खिल रहा हूँ
और खिलता ही रहूँगा !
मैं निरंतर राह नव-निर्माण करता चल रहा हूँ
और चलता ही रहूँगा !
.
• •
(173) ज़िन्दगी का कारवाँ
.
ज़िन्दगी का कारवाँ रुकता नहीं, रुकता नहीं !
.
ये क्षणिक तूफ़ान तो आते गुज़र जाते,
केश केवल कुछ हवा में उड़ बिखर जाते !
पर, सतत गतिमय क़दम इंसान के कब डगमगाये ?
और ताक़त से इसी क्षण पैर जनबल ने उठाये !
ज़िन्दगी का कारवाँ यह
आफ़तों के सामने झुकता नहीं, झुकता नहीं !
ज़िन्दगी का कारवाँ रुकता नहीं, रुकता नहीं !
.
रह नहीं सकती हमेशा यामिनी काली,
रोज़ फूटेगी नयी आकाश से लाली
देख कर जिसको, मनुज हर, दौड़ कर स्वागत करेगा,
पर, तिमिर से डर भयावह रुग्ण क्या साँसें भरेगा ?
ज़िन्दगी का कारवाँ यह
भाग्य के निर्मित सितारों को कभी तकता नहीं !
ज़िन्दगी का कारवाँ रुकता नहीं, रुकता नहीं !

.
मेघ के टुकड़े सरीखा यह अकेलापन,
है बड़ा इससे कहीं चलता हुआ जीवन !
राह चाहे जल-विहीना, वृक्ष-हीना, रेतमय हो,
राह चाहे व्यक्तिहीना, घर-विहीना, ज्योति लय हो,
ज़िन्दगी का कारवाँ यह
हार कर संघर्ष-पथ पर भूल कर थकता नहीं !
ज़िन्दगी का कारवाँ रुकता नहीं, रुकता नहीं !
.
जिस हृदय ने साफ़ अपना लक्ष्य देख लिया
वह तो बहाएगा सदा ही आश का दरिया !
लड़खड़ाता चल रहा जो, मौत की तसवीर है वह,
जो रुका है मध्य पथ में, रोग-वाहक नीर है वह,
ज़िन्दगी का कारवाँ यह
मिट निराशा की नदी में डूब बह सकता नहीं !
ज़िन्दगी का कारवाँ रुकता नहीं, रुकता नहीं !
.
• •
(174) बढ़ते चलो
.
राह पर बढ़ते चलो !
.

दूर मंज़िल है तुम्हारी,
पर, क़दम होंगे न भारी,
आज तक युग की जवानी ने कभी हिम्मत न हारी !
आँधियों से जूझनेवालो !
निडर हँस-हँस प्रखर बढ़ते चलो !
राह पर बढ़ते चलो !
.
बल अमिट विश्वास का है,
बल अतुल इतिहास का है,
बल अथक भावी जगत में फिर नये मधुमास का है,
ओ युवक ! निज रक्त से नव-दृढ़
इमारत विश्व में गढ़ते चलो !
राह पर बढ़ते चलो !
.
तम बिखरता जा रहा है,
नव सबेरा आ रहा है,
सृष्टि का कण-कण सृजन का गीत अभिनव गा रहा है,
इसलिए तुम भी नये युग की
प्रतिष्ठा के लिए लड़ते चलो !
राह पर बढ़ते चलो !
.
• •
(175) नये इंसान से तटस्थ-वर्ग
.

ओ नये इंसान !
तुमसे एक मुझको बात करनी है;
बात वह ऐसी कि जिसको
वर्ग के मेरे अनेकों
मर्द, औरत,
वृद्ध, बच्चे, नवयुवक
सब चाहते हैं आज तुमसे पूछना।
.
और वह है ज़िन्दगी की
आज से बेहतर, नयी, खुशहाल
प्यारी ज़िन्दगी की बात !
.
जो कि उस दिन,
याद है मुझको
अधर में रुक गयी थी,
क्योंकि
तुम संघर्ष में रत थे !
विराधी चोट से सारे
तुम्हारे अंग आहत थे !
.
तुम्हारे पास, पर,
उज्ज्वल भविष्यत् का
बड़ा विश्वास था,
आदमी की शक्ति का इतिहास था;
उसकी विजय का चित्र
आँखों में उभरता था,
युगों का स्नेह
इस घायल धरित्री पर
बिखरता था,
.
तभी तो तुम
दमन के बादलों को चीर कर
काली मुसीबत की
भयानक रात का उर भेद कर,
अभिनव किरण बनकर
नये इंसान की संज्ञा
जगत से पा रहे हो !
और उसको तुम
प्रगति पथ पर
सतत ले जा रहे हो !
.
पास मंज़िल है,
उछलता भोर का दिल है,
बड़ा नज़दीक साहिल है !
.
भरोसा है मुझे निश्चय
तुम्हारे हर इरादे पर,

अकेली बात इतनी है
कि तुम कैसी नयी दुनिया बनाओगे ?
हृदय में आज मेरे भी
नयी रंगीन दुनिया की नयी तसवीर है,
दुनिया को बदलने की प्रसविनी पीर है !
क्या तुम उसे भी देख
मुझको साथ लेकर चल सकोगे ?
.
क्योंकि मैं अबतक
विलग, निर्लिप्त तुमसे
मध्यवर्ती,
दूर,
और तटस्थ था !
.
• •
(176) नयी दिशा
.
चारों ओर है गतिरोध !
पथ अवरुद्ध,
खंडित मान्यताएँ हीन,
जर्जर रूढ़ियों की सामने प्राचीन
फैली 'चीन की दीवार' !
कैसे चढ़ सकोगे
और कैसे कर सकोगे पार ?
.
बोलो !
ये पुरातन नीतियाँ, विश्वास ले,
मृत औ' संकुचित दर्शन पुराना ले,
पुरानी धारणाओं से,
पुरानी कल्पनाओं से
कभी क्या जीत पाओगे ?
कभी अपने बनाये लक्ष्य को
साकार कर क्या देख पाओगे ?
.
बदलते विश्व के सम्मुख,
कि अनुसंधान
जब विज्ञान के बढ़ते चले जाते,
नये साधन, कलें नूतन
व आविष्कार बढ़ प्रतिपल
चुनौती आज
गर्वोन्नत 'जगत की छत' खड़े पामीर को देते,
उठे एवरेस्ट,
गहन प्रशान्त-सागर को,
अनेकों ग्रह-सितारों को,
चमकते दूर चंदा को,
नये उन्नत विचारों के सहारे
जो सतत अधिकार में अपने

सदा करते बढ़े जाते !
हुए पूरे
न होनी आज चाहों के सभी सपने !
.
ज़रा उठ खोल तो आँखें
नयी फैली दमकती रोशनी के सामने !
लो फिर करो उपयोग,
तुम हर वस्तु का उपभोग !
मनुज हो तुम
लिए बल-बुद्धि का भंडार,
मनुजता के सभी अधिकार,
प्रगति का है तुम्हें वरदान,
दुर्दम शक्ति का अभिमान,
तुम्हारा ध्येय है
तोड़ो पुरानी ज़िन्दगी के तार,
जिनमें बज न सकती अब मधुर झंकार !
कहाँ तक कर सकोगे शोध ?
है सब व्यर्थ सारा क्रोध !
.
जब सब डगमगायी हैं दिवारें
नींव से —
गिर कर रहेंगी ही,
कि जब ये आँधियाँ चल दीं क्षितिज से
शीघ्र आ घिर कर रहेंगी ही !
.
तुम्हें तो छोड़ना है
आज यह अपनत्व की
हर वासना का रूप,
कर दो बन्द
तम से ग्रस्त अवनति कूप !
असफल मोह से कर द्रोह,
मिथ्या स्वप्न की माया,
खड़ी बन शून्य की
निस्सार धुँधली क्षीण-सी छाया
कि जिसमें है न कोई आज आकर्षण !
निरर्थक क्या ?
अरे घातक !
.
सजग हो जा
नहीं तो नाश निश्चित है,
खड़ा हो जा
सुदृढ चट्टान-सा बनकर
नहीं तो धर्म तेरा रे कलंकित है,
कि बढ़कर रोक ले तूफ़ान
वरना आज
पौरुष धैर्य विगलित है !
न हो भयभीत

तेरे सामने हुंकारता है बढ़
ज़माना नव्य,
भावी विश्व की ले कल्पना दृढ़ भव्य !
.
जनता की प्रखर आवाज़
गूँजी आज,
जो किंचित नहीं अब चाहती है
'ताजवालों' का कहीं भी राज !
.
पीड़ित, त्रस्त, शोषित, सर्वहारा की
उमड़ती बाढ़-सी धारा,
लगाकर यह गगन-भेदी सबल नारा —
नयी दुनिया बनानी है !
न होगा चिन्ह जिसमें एक भी
मृत घृणित पूँजीवाद का,
बरबाद होगा विश्व से
हर रूप तानाशाह का,
केवल जगत् नव-साम्य-पथ पर
ले सकेगा साँस,
सुख की साँस !
.
जिसमं आश
नूतन ज़िन्दगी की ही भरी होगी,
कि जिसकी राह पर चलकर
धरा सूखी हरी होगी !
.
मिटा देगा उसी पथ का बटोही
दुःख के पर्वत,
विषमता की गहनतम खाइयाँ
सब पाट देगा
कर्म का उत्साह,
नूतन चेतना की प्रेरणा से
ये पुराने सब
क़िले, दीवार, दर्रे टूट जाएँगे !
.
• •
(177) परम्परा
.
परम्परा, परम्परा, परम्परा !
.
जकड़ लिया
मिटा दिया
निशान धूल झोंक कर
युगों चला लिया,
गुलाम हो गये
बना स्वयं अनेक रीतियाँ
प्रथा बनाम रूढियाँ !

.
नवीन स्वर नहीं सुना ?
नया स्वरूप भी नहीं दिखा ?
बदल गया जहान
सत्य आ गया खरा !
कहाँ गयी
परम्परा, परम्परा, परम्परा ?
.
अंध मान्यता,
कठोर मान्यता,
असार मान्यता !
.
अरे बता -—
कि धर्म ... धर्म ... धर्म ... की पुकार
मच रही,
यहाँ वहाँ सभी जगह
कि मार-धाड़,
हो गया मनुज गवाँर,
कौन-सा अमूल्य धर्म वह सुना रहा ?
.
कुरान ?
वेद ? उपनिषद ? पुराण ?
बाइबिल ?
सभी बदल चुके !
नवीन ग्रन्थ और एक 'ईश' चाहिए,
कि जो युगीन जोड़ दे
नया, नया, नया !
व लहलहा उठे
मनुज-महान-धर्म की
सड़ी-गली लता !
.
सुधार मान्यता,
नवीन मान्यता,
सशक्त मान्यता !
.
न व्यर्थ मोह में पड़ो
न कुछ यहाँ धरा !
बदल परम्परा, परम्परा, परम्परा !
.
• •
(178) क्या हुआ?
.
वही शिथिल, अस्वस्थ, रुग्ण है शरीर,
क्या हुआ पहन लिया नवीन चीर ?
वही थके चरण,
वही दबे नयन,
कि क्या हुआ क्षणिक सुरा

उतर गयी गले ?
निमिष नज़र के सामने
अगर यह छा गया चमन !
सपन बहार आ गयी !
.
समीर है वही गरम-गरम,
मरण-वरण बुख़ार
वही गिर रही
उसी प्रकार
शीश से मनुष्य के
अशेष रक्त-धार !
झनझना रहे
हृदय के तार-तार !
.
• •
(179) दूर खेतों पार
.
शीत की काली भयावह रात !
.
दूर खेतों पार जर्जर द्रूह
जीवन स्तब्ध,
धुंध भीषण, काँपती प्रति रूह;
जन-मन दग्ध,
मूक प्राणों के दमन की बात !
शीत की काली भयावह रात !
.
मर्म पर अंतिम विनाशक चोट
घायल त्रस्त,
ले तिरस्कृत प्राण, रज में लोट
पीड़ा ग्रस्त
बद्ध, शोषित, रक्त से तन स्नात !
शीत की काली भयावह रात !
.
एक रोदन का करुणतम शोर
गौरव नष्ट,
छा रहा वैषम्य-विष चहुँ ओर
संस्कृति भ्रष्ट,
साँस प्रति कंपन सिहरता गात !
शीत की काली भयावह रात !
.
नाशकारी गाज सिर पर टूट
मानव दीन,
सभ्यता का अर्थ हिंसा लूट
ममता हीन,
खो गया तम के विजन में प्रात !
शीत की काली भयावह रात !
.
• •

(21) युग और कवि

.

नाश का क्रन्दन भरा,
यह हार का
दारिद्र्य का
दुर्भिक्ष का
अवरुद्ध पथ का
युद्ध का
मिटता हुआ,
बंधुत्व से हटता हुआ
इतिहास है, इतिहास है !
संस्कृति, कला औ' सभ्यता का
सामने मानों खड़ा उपहास है !

.

जब आज दानव कर रहा
शोषण भयंकर
रूप मानव का बनाये,
और उठती जा रही हैं
स्नेह, ममता की
मनुज-उर-भावनाएँ,
बढ़ रही हैं तीव्र गति से
श्वास पर हर
चिर बुभुक्षित मानवों के
दग्ध-जीवन की
विषैली गैस-सी घातक कराहें !

.

ध्वंस का
निर्मम मरण का,
घोर काला
यातना का
चित्रा यह म्रियमाण है !
उजड़ा हुआ है अन्दमन-सा !
सिहरता तीखा मरण का गान है !

.

आदर्श सारे गिर रहे;
मानव बुझा कर
ज्ञान का दीपक
निविड़तम-बद्ध दुनिया
देखना बस चाहता है;
क्योंकि उसके पाप अगणित
कौन है जो देख पाएगा ?

.

धरा पर
'शांति, सुख, नवयुग-व्यवस्था' के लिए
वह लूट लेगा
विश्व का सर्वस्व !
लोभी ! लड़ रहा है,

कर रहा है ध्वस्त
कितने लहलहाते खेत,
मधु जीवन !
रही है मिट मनुजता ही स्वयं
मानो कि की
'हाराकिरी' भगवान ने !
.
है मंद जीवन-दीप की
आभा सुनहली।
युग हुआ शापित कलंकित ;
किन्तु तुम होना न किंचत
धैर्य विगलित, चरण विजड़ित !
.
कवि उठो !
रचना करो,
तुम एक ऐसे विश्व की
जिसमें कि सुख-दुख बँट सकें,
निर्बन्ध जीवन की
लहरियाँ बह चलें,
निद्वन्द्व वासर
स्नेह से परिपूर्ण रातें कट सकें,
सब की,
श्रमात्मा की, गरीबों की
न हो व्यवधान कोई भी !
.
नये युग का नया संदेश दो !
हर आदमी को आदमी का वेश दो !
.
• •
(181) विश्वास
.
बढ़ो विश्वास ले, अवरोध पथ का दूर होएगा !
.
तुम्हारी ज़िन्दगी की आग बन अंगार चमकेगी,
अँधेरी सब दिशाएँ रोशनी में डूब दमकेंगी,
तुम्हारे दुश्मनों का गर्व चकनाचूर होएगा !
बढ़ो विश्वास ले, अवरोध पथ का दूर होएगा !
.
सतत गाते रहो वह गीत जिसमें हो भरी आशा,
बताए लक्ष्य की दृढ़ता तुम्हारी आँख की भाषा,
विरोधी हार कर फिर तो, तुम्हारे पैर धोएगा !
बढ़ो विश्वास ले, अवरोध पथ का दूर होएगा !
.
मुसीबत की शिलाएँ सब चटककर टूट जाएँगी,
गरजती आँधियाँ दुख की विनत हो धूल खाएँगी,
तुम्हारे प्रेरणा-जल से मनुज सुख-बीज बोएगा !
बढ़ो विश्वास ले, अवरोध पथ का दूर होएगा !

.

• •

(182) आश्वस्त

.

ज़िन्दगी के दीप
जिसने हैं बुझाये,
और भू के गर्भ से
उगते हुए पौधे मिटाये,
शस्य-श्यामल भूमि को
बंजर किया जिसने,
नवल युग के हृदय पर मार
पैना गर्म
यह खंजर दिया जिसने —
उसी से
कर रही है लेखनी मेरी बग़ावत !
रुक नहीं सकती
कि जब तक
गिर न जाएगा धरा पर
आततायी मत्त गर्वोन्नत,
रुक नहीं सकता कभी
स्वर
जब मुखर होकर
गले से हो गया बाहर,
रुक नहीं सकता कभी
तूफ़ान
जिसने व्योम में हैं
फड़फड़ाए पर,
रुक नहीं सकता कभी
दरिया
कि जिसने खोल आँखें
ख़ूब ली पहचान
बहने की डगर !
वह तो फैल उमड़ेगा,
कि चढ़कर
पर्वतों की छातियों पर
कूद उछलेगा !
सभी पथ में अड़ी भीतें
गरज उन्मुक्त तोड़ेगा !

.

मुझे विश्वास है साथी —
तुम्हारे हाथ
इतने शक्तिशाली हैं
कि प्रतिद्वन्द्वी पराजित हो
अवनि पर लोट जाएगा,
तुम्हारी आँख में
उतरी बड़ी गहरी चमकती तीव्र
लाली है

कि जिससे आज मैं आश्वस्त हूँ !
युग का अँधेरा छिन्न होएगा,
सभी फिर से बुझे दीपक
नयी युग-चेतना के स्नेह को पाकर
लहर कर जल उठेंगे !
सृष्टि नूतन कोपलों से भर
सुखी हो लहलहाएगी !
कि मेरी
मोरनी-सी विश्व की जनता
नये स्वर-गीत गाएगी !
व खेतों में निडर हो
नाचकर पायल बजाएगी !
.
• •
(183) दीपक जलाओ
.
आज मेरे स्नेह से दीपक जलाओ !

विश्व कुहराच्छन्न, धूमिल सब दिशाएँ,
चल रही हैं घोर प्रतिद्वन्द्वी हवाएँ,
त्राण मेरे अंक में, आकर समाओ !
आज मेरे स्नेह से दीपक जलाओ !
.
आज नूतन फूटती आओ जवानी,
मुक्त स्वर में गूँज लो अवरुद्ध वाणी,
यह नवल संदेश युग का, कवि, सुनाओ !
आज मेरे स्नेह से दीपक जलाओ !
.
गिर रही हैं जीर्ण दीवारें सहज में,
टूटती हैं शीर्ण मीनारें सहज में,
हो नया निर्माण, जर्जरता हटाओ !
आज मेरे स्नेह से दीपक जलाओ !
.
आज मेरी बाहुओं का बल तुम्हारा,
आज मेरा शीश - प्रण अविचल तुम्हारा,
त्रस्त, घायल, सुप्त दुनिया को जगाओ !
आज मेरे स्नेह से दीपक जलाओ !
.
• •
(184) आभास होता है
.
आभास होता है —
कि सदियों बद्ध बंधन
आज खुलकर ही रहेंगे !
इन धुएँ के बादलों से
आग की लपटें लरज कर
व्योम को
निज बाहुओं में घेर लेंगी !

शक्तिमत्ता-मद
विषैला-नद जलेगा,
हर उपेक्षित भीम गरजेगा
तुमुल संगर धरा पर !
.
गढ़ दमन के
राह के फैले हुए आटे सदृश
संघर्ष की भीषण हहरती
आँधियों के बीच
उड़ मिट जाएँगे !
.
विश्वास होता है —
कि दौड़ा आ रहा
उन्मुक्त युग-खग,
सब पुरातन जाल जर्जर तोड़कर !
.
अब तो जलेगा
सत्य का अंगार,
जिसके ही लिए
यह आज तक अविश्रांत
लालायित रहा है
पीड़ितों भूले हुओं का
जागता संसार !
.
मोचन शोक,
दुख हततेज,
गिर रही है भंगिमा
माया विभेदन,
दीखती
अभिनव-किरण!
.
• •
(185) आज देखा है
.
आज देखा है —
मनुज को ज़िन्दगी से जूझते,
संघर्ष करते !
वंचना की टूटती चट्टान की आवाज़
कानों ने सुनी है,
और पैरों को हुआ महसूस
धरती हिल रही है !
आज मन भी
दे रहा निश्चय गवाही —
दुःख-पूर्णा-रात काली
अब क्षितिज पर गिर रही है !
.
भूमि जननी को हुआ कुछ भास